IJAER/Sepetember-October 2022/Volume-11/Issue-5 ISNN 2278-9677
International Journal of Arts & Education Research

छात्र जीवन में अष्टांग योग द्वारा मानसिक एवं शारीरिक रचना तंत्र पर पड़ने वाले प्रभाव का संक्षिप्त मूल्यांकन

ममता गढ़वाल
;पंजी. संख्या - 23619071
शोधार्थी - शिक्षा शास्त्र
श्री जगदीश प्रसाद झाबर मल टिबरेवाल विश्वविद्यालय - चुड़ैला (झुंझुनू) राजस्थान

शोध निर्देशक- **डॉ. दुर्गालाल पारीक**
एसो. प्रोफ़ेसर - श्री जगदीश प्रसाद झाबर मल् टिबरेवाल विश्वविद्यालय - चुड़ैला (झुंझुनू) राजस्थान

शोध सह् निर्देशिका - **डॉ. मनोज**
प्राचार्या - कानोड़िया बी. एड. कॉलेज - मुकुंदगढ़ (झुंझुनू) राजस्थान

सार–
योग तत्वतः बहुत सूक्ष्म विज्ञान पर आधारित एक आध्यात्मि विषय है जो मन एवं शरीर के बीच सामंजस्य स्थापित करने पर ध्यान देता है। यह स्वस्थ जीवन – यापन की कला एवं विज्ञान है। योग शब्द संस्कृत की युज धातु से बना है जिसका अर्थ जुड़ना या एकजुट होना या शामिल होना है। योग से जुड़े ग्रंथों के अनुसार योग करने से व्यक्ति की चेतना ब्रह्मांड की चेतना से जुड़ जाती है जो मन एवं शरीर, मानव एवं प्रकृति के बीच परिपूर्ण सामंजस्य का द्योतक है। आधुनिक वैज्ञानिकों के अनुसार ब्रह्मांड की हर चीज उसी परिमाण नभ की अभिव्यक्ति मात्र है। जो भी अस्तित्व की इस एकता को महसूस कर लेता है उसे योग में स्थित कहा जाता है और उसे योगी के रूप में पुकारा जाता है जिसने मुक्त अवस्था प्राप्त कर ली है जिसे मुक्ति, निर्वाण या मोक्ष कहा जाता है। इस प्रकार, योग का लक्ष्य आत्म–अनुभूति, सभी प्रकार के कष्टों से निजात पाना है जिससे मोक्ष की अवस्था या कैवल्य की अवस्था प्राप्त होती है। जीवन के हर क्षेत्र में आजादी के साथ जीवन–यापन करना, स्वास्थ्य एवं सामंजस्य योग करने के प्रमुख उद्देश्य होंगे। योग का अभिप्राय एक आंतरिक विज्ञान से भी है जिसमें कई तरह की विधियां शामिल होती हैं जिनके माध्यम से मानव इस एकता को साकार कर सकता है और अपनी नियति को अपने वश में कर सकता है।

प्रस्तावना–
ऐसा माना जाता है कि जब से सभ्यता शुरू हुई है तभी से योग किया जा रहा है। योग के विज्ञान की उत्पत्ति हजारों साल पहले हुई थी, पहले धर्मों या आस्था के जन्म लेने से काफी पहले हुई थी। योग विद्या में शिव को पहले योगी या आदि योगी तथा पहले गुरू या आदि गुरू के रूप में माना जाता है। कई हजार वर्ष पहले, हिमालय में कांति सरोवर झील के तटों पर आदि योगी ने अपने प्रबुद्ध ज्ञान को अपने प्रसिद्ध सप्तऋषि को प्रदान किया था। सत्पऋषियों ने योग के इस ताकतवर विज्ञान को एशिया, मध्य पूर्व, उत्तरी अफ्रीका एवं दक्षिण अमरीका सहित विश्व के भिन्न – भिन्न भागों में पहुंचाया। रोचक बात यह है कि आधुनिक विद्वानों ने पूरी

दुनिया में प्राचीन संस्कृतियों के बीच पाए गए घनिष्ठ समानांतर को नोट किया है। तथापि, भारत में ही योग ने अपनी सबसे पूर्ण अभिव्यक्ति प्राप्त की। अगस्त नामक सप्तऋषि, जिन्होंने पूरे भारतीय उप महाद्वीप का दौरा किया, ने यौगिक तरीके से जीवन जीने के इर्द–गिर्द इस संस्कृति को गढ़ा।

योग करते हुए पित्रों के साथ सिंधु – सरस्वती घाटी सभ्यता के अनेक जीवाश्म अवशेष एवं मुहरें भारत में योग की मौजूदगी का संकेत देती हैं।योग करते हुए पित्रों के साथ सिंधु – सरस्वती घाटी सभ्यता के अनेक जीवाश्म अवशेष एवं मुहरें भारत में योग की मौजूदगी का सुझाव देती हैं। देवी मां की मूर्तियों की मुहरें, लैंगिक प्रतीक तंत्र योग का सुझाव देते हैं। लोक परंपराओं, सिंधु घाटी सभ्यता, वैदिक एवं उपनिषद की विरासत, बौद्ध एवं जैन परंपराओं, दर्शनों, महाभारत एवं रामायण नामक महाकाव्यों, शैवों, वैष्णवों की आस्तिक परंपराओं एवं तांत्रिक परंपराओं में योग की मौजूदगी है। इसके अलावा, एक आदि या शुद्ध योग था जो दक्षिण एशिया की रहस्यवादी परंपराओं में अभिव्यक्त हुआ है। यह समय ऐसा था जब योग गुरू के सीधे मार्गदर्शन में किया जाता था तथा इसके आध्यात्मिक मूल्य को विशेष महत्व दिया जाता था। यह उपासना का अंग था तथा योग साधना उनके संस्कारों में रचा–बसा था। वैदिक काल के दौरान सूर्य को सबसे अधिक महत्व दिया गया। हो सकता है कि इस प्रभाव की वजह से आगे चलकर 'सूर्य नमस्कार' की प्रथा का आविष्कार किया गया हो। प्राणायाम दैनिक संस्कार का हिस्सा था तथा यह समर्पण के लिए किया जाता था। हालांकि पूर्व वैदिक काल में योग किया जाता था, महान संत महर्षि पतंजलि ने अपने योग सूत्रों के माध्यम से उस समय विद्यमान योग की प्रथाओं, इसके आशय एवं इससे संबंधित ज्ञान को व्यवस्थित एवं कूटबद्ध किया। पतंजलि के बाद, अनेक ऋषियों एवं योगाचार्यों ने अच्छी तरह प्रलेखित अपनी प्रथाओं एवं साहित्य के माध्यम से योग के परिरक्षण एवं विकास में काफी योगदान दिया।

भारत में योग का महत्त्व

भारत में योग का इतिहास बहुत प्राचीन है। यहाँ प्रागैतिहासिक युग से ही योग की विविध प्रणालियों का विकास हुआ। यहाँ का मानव जीवन की बाह्य मानसिक एवं भौतिक प्राणिक आवेगों एवं कामनाओं की पूर्ति से सन्तुष्ट नहीं हुआ। उसने वस्तुओं के पीछे छिपे सत्य को जानने का प्रयास किया। मनुष्य ने शरीर के अन्दर छिपे अवगूढ़ तत्वों तथा बाह्य प्रकृति के व्यापारों की जानकारी प्राप्त की। उसे ज्ञात हुआ कि हमारे दुःख का कारण सच्चिदानन्द से अलगाव है। सच्चिदानन्द से मिलन का प्रयास ही विभिन्न योग प्रणालियों का उद्देश्य है। भारत में वेदों और उपनिषदों से आज तक योग का महत्व बना हुआ है।। भले ही उसके रूप में बदलाव आ गया हो। भारत में योग का प्रारम्भ भगवान शिव से माना जाता है जिसे मनुष्यों के लिये प्रस्तुत करने का श्रेय भगवान शिव के प्रथम शिष्य गोरक्षनाथ को है। उन्होंने भगवान शिव से योग की शिक्षा प्राप्त कर साधारण जन के कल्याण के लिये उसे साधारण मनुष्यों तक पहुँचाया। योग के ग्रन्थों में पांतजलि योग सूत्र प्रथम ग्रन्थ माना जाना है। यद्यपि योग का बिखरा हुआ रूप हमें अन्य ग्रन्थों में भी मिल जाता है परन्तु एक क्रम बद्ध तरीके से ग्रन्थ के रूप में योग को प्रस्तुत करने का श्रेय पतन्जलि मुनि को जाता है। प्राचीन भारत में योग गुरु शिष्य पद्धति के अन्तर्गत ही सिखाया जाता है। इसी कारण काफी लम्बे समय तक योग को पुस्तकीय ज्ञान के रूप में प्रस्तुत नहीं किया जा सका। गुरू अपने सुपात्र शिष्य को ही योग की गूढ़ विद्या का ज्ञान देता था। योग में फैली इस भ्रान्तियों ने कि योग शिक्षा सन्यासियों, साधुओं के लिये है, योग को साधारण जन से दूर कर दिया। पाश्चात्य प्रभाव के कारण भारत भी आधुनिक भौतिकवाद की दौड़ में शामिल हो गया जिससे भारतीय धीरे–धीरे योग तथा आध्यात्म के क्षेत्र से दूर होते चले गये। यद्यपि आज भी भारत में योग में पारंगत

लोगों की कमी नहीं है परन्तु भौतिकता से त्रस्त पाश्चात्य जन आज योग की ओर अधिक तेजी से भाग रहे हैं। भारत में भिन्न–भिन्न समय में ऋषि मुनियों ने योग को जीवित रखने के विभिन्न प्रयास किये हैं। आधुनिक समय के स्वामी शिवानन्द, स्वामी कुवलयानन्द, श्री अरविन्द ऐसे ही योगी हुए जिन्होंने योग के प्राचीन रूप को आज के समाज के अनुसार वैज्ञानिक रूप दिया। यद्यपि आज जो योग का रूप हम भारत में देखते हैं वह पाश्चात्य समाज द्वारा योग के रूपान्तरण की झलक भी प्रस्तुत करता है परन्तु फिर भी भारतीय मनीषियों ने भारतीय योग पद्धति को बनाये रखने के सराहनीय कार्य किये हैं।

वर्तमान युग में योग का महत्व

बढ़ते औद्योगीकरण एवं कम्प्यूटरीकरण के इस वर्तमान समय में साधारण मनुष्य से भी अपेक्षा की जाती है कि वह तेज तर्रार बने। मनुष्य को अपनी बौद्धिक क्षमता से अधिक कार्य करना पड़ रहा है, वहीं शारीरिक श्रम न्यूनतम होते जा रहे हैं। भौतिक साधनों के ऐशो आराम मनुष्य को शारीरिक स्तर पर बहुत कमजोर बना देते हैं, जिससे आज के समय में मनुष्य तनावग्रस्त और निराश है। इस भाग दौड़ में वह स्वयं को बहुत असहाय महसूस करता है। यद्यपि अब कुछ औद्योगिक संस्थानों में कर्मचारियों के मनोरंजन के साधन उपलब्ध कराये जाने लगे हैं जिससे मनुष्य स्वयं को मानसिक रूप से कुछ आराम दे सके, परन्तु मनुष्य को शारीरिक और मानसिक स्तर पर स्वस्थ रखने के लिये जो भूमिका आज के समय में योग निभा रहा है उतना और कोई साधन नहीं कर सकता। योग के साधन जहाँ मनुष्य को शारीरिक रूप से स्वस्थ तथा बलशाली बनाते हैं वहीं मानसिक स्तर पर शान्ति प्रदान करते हैं।

विश्व में प्रत्येक व्यक्ति अनन्त एवं अपरीमित शक्तियो का पुन्ज है, उसमें अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त सुख शान्ति तथा अनन्त शक्ति तथा अस्तित्व अन्तर्निहित है। इतनी विराट शक्तियों का अधिपति होने पर भी वह संसार सागर में गोते खाता रहता है। संसार में जहाँ भी देखें, निराशा, दुःख, संघर्ष, असंतोष ही दिखाई पड़ता है। सारे प्राणी आनन्द की खोज में रहते हैं किन्तु कोई भी आनन्द प्राप्त नहीं कर पाता, क्योंकि जिन बाहरी विषयों में हम आनन्द की खोज करते हैं वे आन्तरिक सुख प्रदान नहीं कर सकते। आन्तरिक सुख प्रदान करने के लिये हमें अर्न्तमुखी बनना होगा जिसके लिये योग साधना से अच्छा साधन और कोई नहीं हो सकता। योग साधना, मन और शरीर दोनों को स्वस्थ रखती है। यदि मन विक्षिप्त हो तो शरीर शिथिल रहेगा, यदि शरीर बीमार है तो मन पर उसका कुप्रभाव होगा। योग में आसन प्राणायाम, धारणा, ध्यान आदि के द्वारा शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य को संतुलित रखा जा सकता है। ये क्रियायें आत्म संयम विकसित करने में सहायक होती हैं क्योंकि इनकी सहायता से शरीर के कोषाणुओं तथा स्नायुमण्डल में उपस्थित अशुद्धियों को दूर करने तथा उनमें पर्याप्त सहन–शक्ति तथा आत्म विश्वास विकसित करने में सहायता मिलती है। यदि मनुष्य अपनी सहन शक्ति बढ़ा लेता है तो वह निराशा तथा तनाव के कारण होने वाले मानसिक रोग से स्वयं को बचा सकता है। हमारे मानसिक रोगों का मुख्य कारण हमारे लक्ष्य में रूकावट आने पर उत्पन्न तनाव है। यह रूकावट बाहरी कारक जैसे किसी व्यक्ति, सामाजिक बन्धन द्वारा भी हो सकती है अथवा हमारे स्वयं की शारीरिक या मानसिक क्षमता की कमी के कारण भी हो सकती है। योग के साधन हमारी मानसिक तथा शारीरिक क्षमता को तो बढ़ाते हैं साथ ही हमारा सामाजिक समायोजन करने में भी मदद करते हैं।

निरन्तर योगाभ्यास हमारे शरीर को अन्दर से स्वस्थ तथा मजबूत बनाता है। हमारे आन्तरिक अंग जैसे पाचन तन्त्र, श्वसन तन्त्र, रक्त परिसंचरण तन्त्र सुचारु रूप से कार्य करने लगते हैं, जिससे मनुष्य आयु बढ़ने के साथ आने वाले रोगों से लम्बे समय तक बचा रहता है। उपरोक्त कथन का यह अर्थ नहीं है कि एकमात्र योग

से ही मानव की सभी समस्याओं का निराकरण हो जायेगा। अन्य साधन भी अपना महत्व रखते हैं परन्तु चेतना का रूपान्तर योग द्वारा ही सम्भव है, अतः योग आधुनिक जीवन में अत्यधिक महत्व रखता है।

अष्टांक योग

वर्तमान में 'अष्टांग योग' विश्व में एक चिकित्सा पद्धति के साथ मानव के समग्र विकास की विधा के रूप में उभर रहा है। योग प्राचीन भारतीय संस्कृति व आध्यात्मिक विधा है। सृष्टि में आदिकाल से लेकर अब तक अनेकों ऋषि मुनियों ने योग के क्षेत्र में योगदान दिया है। ध्यान व समाधि की परा विधा से लेकर, रोगों से आक्रान्त मानव को रोगमुक्त करने के लिए योग विधा, प्राणायाम, मुद्राओं एवं आसनों का आविष्कार किया। इन्हीं पद्धतियों में योग के विभिन्न स्वरूप देखने को मिलते हैं। इन सभी पद्धतियों में अष्टांग–योग की अपनी अलग पहचान है। योग पद्धति शारीरिक ही नहीं वरन् मनोवैज्ञानिक एवं आध्यात्मिक विकास पर भी बल देती है।

वर्तमान में योग की विभिन्न विधियाँ सामने आयी है जैसे विपश्यना विधि, एकीकृत ध्यान, रेचन विधि, विक्रम योग आदि। लेकिन मूल रूप में हमें इन सभी पद्धतियों में पतंजलि अष्टांग–योग दिखाई देता है। वर्तमान की आवश्यकता के अनुसार कुछ नयी पद्धतियों को भी सम्मिलित किया गया है। इन नवीन पद्धतियों का प्राचीन अष्टांग येाग से कोई विरोध नहीं है वरन् वे उसे परिवर्तित परिवेश में पुनर्स्थापित करने का सार्थक प्रयास कर रही हैं।

शिक्षाविद् व चिकित्साशास्त्रियों द्वारा किये गये विभिन्न शोधों के परिणामस्वरूप तथा 21वीं शताब्दी में इसकी प्रासंगिकता बढ़ती जा रही है उन्होंने अपने किए गए अध्ययनों से यह निष्कर्ष निकाला कि योग व्यक्तित्व विकास का अहम पथ हो सकता है छात्र जीवन में भी योग की उपयोगिता उतनी ही सिद्ध हो रही है, जितनी कि वैश्विक व सामाजिक जीवन में स्वीकारी गयी है।

छात्र जीवन में अष्टांग योग द्वारा शारीरिक रचना तंत्र पर प्रभाव

योगशास्त्रियों के मतानुसार अष्टांग योग–पतंजलि द्वारा पूर्ण वैज्ञानिक विवेचना व शोध का परिणाम है। योग पूर्ण रूप से शरीर के विभिन्न अवयवों पर प्रभाव डालता है। योग का उद्देश्य एक पीड़ा मुक्त सुदृढ़ शरीर विकसित करना है। शारीरिक श्रम व गठन की विभिन्न पद्धतियाँ प्रचलित है जैसे खेल, ऐरोबिक्स, शारीरिक व्यायाम आदि। विद्वानों का मत है कि योग इन सभी की तुलना में अधिक उपयोगी सिद्ध हुआ है, क्योंकि यह प्रत्येक अंग को पुष्ट ही नहीं करता बल्कि सूक्ष्म स्तर पर भी मजबूती प्रदान करता है। योग ऊर्जा का संतुलन व सदुपयोग है। पतंजलि इसी संदर्भ में योग को अनुशासन कहते हैं।

योग के अंग 'यम' व 'नियम' का शारीरिक विकास पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। नियम के द्वारा शारीरिक शुद्धता उपलब्ध होती है। मुनि पतंजलि के अनुसार शौच व तप शारीरिक शुद्धि प्रदान करते हैं। पतंजलि तप के माध्यम से आंतरिक काय शुद्धि बताते हैं। शौच बाह्य शुद्धि प्रदान करता है। शिक्षा के क्षेत्र में छात्रों के लिए शौच व तप अत्यंत उपयोगी है। छात्र इनके द्वारा शारीरिक विकास एवं स्वस्थ शरीर प्राप्त कर सकते हैं। यहाँ 'तप' शारीरिक द्वन्दों को सहन करना बताया गया है। हठयोग में भी तप व शौच के नियम द्वारा शारीरिक शुद्धता का उल्लेख मिलता है।

वर्तमान युग के छात्रों में नियम व अनुशासन संबंधी अनियमितता से छात्रों के स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव पड़ा है। योग के यम, नियम, आसन, प्राणायाम, शारीरिक स्वास्थ्य देने में लाभप्रद सिद्ध हो सकते हैं। इसी संदर्भ में आचार्य रजनीश 'यम' को संतुलित जीवन बताते हैं। जिसमें शारीरिक व आन्तरिक सुरक्षा प्राप्त की जा सकती

है। स्वामी विवेकानन्द जी भी नियम को शरीर की देखभाल ही बताते हैं। उनके अनुसार 'यम' व 'नियम' के द्वारा प्रत्येक प्रकार की मलिनता दूर की जा सकती है। हठयोग में भी षट्–कर्म (धौति, नेति, कपालभांति, त्राटक, नौलि, वस्ति) के माध्यम से शारीरिक शुद्धता की प्राप्ति बताया है। वर्तमान में छात्रों की बाहरी शुद्धता पर बल दिया जाता है जो कि संपूर्ण विकास में उपयोगी नहीं है। योग शास्त्रियों के मतानुसार योग के माध्यम से छात्र शारीरिक शुद्धता ही प्राप्त नहीं कर सकते बल्कि शारीरिक सजगता भी प्राप्त करते हैं। छात्रों में लक्ष्य प्राप्ति के लिए शारीरिक शुद्धता का विशेष स्थान है यह विकास का आदि स्त्रोत है।

योग का शरीर व नाड़ी तंत्र पर भी प्रभाव देखा गया है। योग, शारीरिक शुद्धि में नाड़ी तंत्र की शुद्धि को भी महत्वपूर्ण बताता है क्योंकि उसके अनुसार 'प्राण' जीवन का आधार है और प्राण का वहन नाड़ियों के माध्यम से ही होता है। इसलिए नाड़ियों का शुद्ध होना आवश्यक है। वर्तमान जीवन शैली में नाड़ी तंत्र पर विपरीत प्रभाव पड़ा है जिसके फलस्वरूप विभिन्न शारीरिक दोष उत्पन्न हुए हैं। छात्रों के विकास में विद्वानों ने नाड़ी शोधन को आवश्यक माना है। जिससे शरीर के प्रत्येक अवयव का स्वास्थ्य उपलब्ध हो सके। स्वामी विवेकानन्द जी नाड़ी प्रवाहों के माध्यम से स्थूल शरीर को वश में करने की बात कहते हैं। श्वास–प्रश्वास के विज्ञान के माध्यम से उत्तम स्वास्थ्य प्राप्त किया जा सकता है। उनके अनुसार ''श्वास–प्रश्वास की प्रथम क्रिया (प्राणायाम) बिल्कुल निरापद है और बड़ी स्वास्थ्यप्रद है। इसी प्रकार स्वामी शिवानन्द सरस्वती जी के अनुसार प्राणायाम से स्नायु मांसपेशियाँ और ग्रंथियाँ सशक्त होती है। इसलिए प्राणायाम रोगी एवं स्वस्थ्य सभी प्रकार के मनुष्यों के लिए आवश्यक है। हृदय गति एवं ऑक्सीजन के उपयोग का सीधा सम्बन्ध हमारी नाड़ियों की शुद्धता पर पड़ता है ऐसा आज वैज्ञानिक व चिकित्सा विज्ञान भी सिद्ध कर चुका है। ऑक्सीजन के समुचित उपयोग से शरीर के विभिन्न अवयव सुचारू रूप से काम करते है। स्थूल रूप से प्राणायाम (श्वास–प्रश्वास) के द्वारा ऑक्सीजन की मात्रा शरीर में बढ़ायी जा सकती है जिससे कि शरीर बलिष्ठ व स्वस्थ होता है। विद्वानों के अनुसार यदि शरीर को किसी प्रकार से अधिक ऑक्सीजन प्राप्त होगी तो शरीर के सभी अवयवों की व्याधियों के लिए वह एक औषधि की तरह कार्य करेगी। हठयोगं के अनुसार ''वायु का ठीक प्रकार से धारण उदर विकारों को भी नष्ट कर देता है। मदाग्नि मिलकर अग्नि का दीपन होता है। इस अग्नि से विभिन्न रोग स्वतः ही मिट जाते हैं। योगियों के अनुसार वायु सिर्फ श्वास–प्रश्वास का ही माध्यम नहीं है यह 'प्राण' का वाहन भी है। इसलिए नाड़ी शोधन में ऑक्सीजन से 'प्राण' को विभिन्न शारीरिक भागों तक पहुँचाया जाता है। योगशास्त्र के अनुसार प्राणवायु जीवन है और इसका अधिकाधिक प्रयोग करें। स्वामी शिवानन्द जी के अनुसार ''प्राणायाम के बिना किसी भी रोग का स्थाई इलाज नहीं हो सकता।'' उनके अनुसार केवल प्राणायाम ही शरीर को इस विषाक्त कार्बन से मुक्त कर सकता है जिसके फलस्वरूप ऑक्सीजन प्राप्त होता है तथा स्नायु एवं ग्रंथियाँ पोषण प्राप्त करती है। आधुनिक योगी स्वामी रामदेव जी के मतानुसार भी ऑक्सीजन की पर्याप्त मात्रा द्वारा शरीर को निरोग किया जा सकता है। योग के द्वारा शरीर के अंग जैसे फेफड़ों, हृदय, मस्तिष्क आदि को बलिष्ठ एवं आंतरिक स्वास्थ्यता प्रदान की जा सकती है।

स्वामी विवेकानन्द जी ब्रह्मचर्य को सबसे बड़ी शक्ति मानते हैं। उनके अनुसार ''एक मात्र ब्रह्मचर्य का ठीक ठीक पालन कर सकने पर सभी विधाएँ बहुत ही कम समय में हस्तगत हो जाती हैं। मनुष्य 'ओजस' के प्रभाव से श्रुतिधर, स्मृतिधर बन जाता है। जिससे विद्यार्थी अल्प समय में विभिन्न विधायें अर्जित कर सकते हैं। अतः योगाभ्यास छात्रों के संपूर्ण विकास के क्रम में शारीरिक विकास का महत्वपूर्ण स्त्रोत प्रतीत होता है।

छात्र जीवन में अष्टांग योग द्वारा मानसिक प्रभाव

योगाभ्यास शारीरिक लाभ के साथ मानसिक लाभ भी प्रदान करता है। विद्वानों ने मानसिक शक्तियों के उदय, नियंत्रण, समन्वयन आदि के लिए योगाभ्यास को उपयोगी बताया है। छात्रों के जीवन काल में योगाभ्यास की सर्वाधिक आवश्यकता है क्योंकि यह मानसिक विकास का काल होता है। विभिन्न अध्ययन इस बात की पुष्टि करते हैं कि अष्टांग योग छात्रों के मानसिक विकास के साथ मानसिक समस्याओं का निराकरण करने के लिए भी सार्थक सिद्ध हुआ है।

वर्तमान छात्रों में प्रमुख समस्या 'संशय की प्रवृत्ति' के रूप में दिखाई देती है। संशय से युक्त छात्र कभी भी लक्ष्य पर पूरी शक्ति लगाने में असमर्थ होता है। गीता में भगवान श्रीकृष्ण बारम्बार अर्जुन को संशय से निकलने व युद्ध करने की सलाह देते रहे। श्रीकृष्ण कहते हैं कि ''हे अर्जुन तुम्हारे हृदय में अज्ञान के कारण जो संशय उठे हैं उन्हें ज्ञान रूपी शस्त्र से काट डालो।'' योगाभ्यास व योग इसी ज्ञान रूपी शस्त्र को प्रदान करता है। मुनि पतंजलि संशय को लक्ष्य के प्रति विघ्न के रूप में देखते हैं। संशय को उन्होंने विक्षेप माना है। योग मानसिक संशय समाप्त कर लक्ष्य की ओर अग्रसर करता है। गीता में अर्जुन को इसी संदर्भ में श्रीकृष्ण योगी बनने की सलाह देते हैं।

विद्वानों एवं योगियों के अनुसार संशय चंचल चित्त की अवस्था है। मस्तिष्क में निरन्तर विचार उत्पन्न होने से संशय उत्पन्न होता है। मुनि पतंजलि संशय को स्वाध्याय, आसन, प्राणायाम, ध्यान आदि से दूर करते हैं। मुनि पतंजलि चित्त की दृढ़ता को लक्ष्य की प्राप्ति के लिए आवश्यक मानते हुए आसन का प्रावधान करते हैं। मुनि पतंजलि आसन से द्वन्दों की समाप्ति कहते हैं। जैसे ही द्वन्द समाप्त होते हैं संशय भी समाप्त हो जाता है। इसी संदर्भ में गीता भी आसन का महत्व बताती है। संशय हमें भ्रमित ज्ञान भी देता है। संशय से युक्त छात्र वास्तविक ज्ञान व लक्ष्य को नहीं जान सकते हैं। श्रीकृष्ण, अर्जुन से इस संदर्भ में कहते हैं कि मन को मुझसे आसक्त करके योगाभ्यास करते हुए मुझे पूर्णतयाः संशयरहित जान सकते हैं। विद्वानों के अनुसार श्रीकृष्ण का तात्पर्य यही है कि जब तक कोई संशय मुक्त नहीं होगा तब तक पूर्ण सत्य या ज्ञान को अर्जित नहीं कर सकता।

हठयोग योग में लक्ष्य की प्राप्ति के लिए छः गुणों में संशय रहिता को सम्मिलित किया गया है। जीवन में भी किसी लक्ष्य की सिद्धि के लिए संशय रहित होना आवश्यक है। हठयोग आसन, प्राणायाम के माध्यम से योगी को संशयरहित करता है। आधुनिक चिंतक आचार्य रजनीश के अनुसार ''पतंजलि संशय के विषय में कह रहे हैं; निश्चितता के, दृढ़ता के विरूद्ध है संशय। अनिश्चितता से भरा व्यक्ति, वह व्यक्ति जो दृढ़ नहीं होता, संशय में होता है।'' आचार्य रजनीश 'ओम्' के जप को संशय रहित होने में सहायक मानते हैं। उनके अनुसार 'ओम' जप के द्वारा मौन मन में उतरता है, तो निर्णय लेना ज्यादा आसान हो जाता है। विद्वानों ने 'ओम्' व प्राणायाम को संशय रहितता के लिए उपयोगी माना है क्योंकि ये सारे योगाभ्यास मन को शांत करके निर्णय लेने में मदद करते हैं। डिवाइन लाईफ सोसाइटी के स्वामी कृष्णानन्द जी स्वाध्याय को भी संशय के संदर्भ में उपयुक्त बताते हैं। उनके अनुसार छात्रों में स्वाध्याय के अभ्यास से लक्ष्य के प्रति संदेह समाप्त हो जाता है। स्वाध्याय में मंत्र व जप को भी शामिल करते हैं।

विद्वानों के अनुसार 'असंतोष' वास्तव में मन की भ्रमपूर्ण अवस्था है। स्वामी चिदानन्द सरस्वती इस संदर्भ में 'स्वाध्याय' को महत्वपूर्ण मानते हैं। उनके अनुसार ''सभी समस्याओं का केन्द्र मन होता है। मन में ही सारी समस्याओं का समाधान भी होता है। इसलिए 'स्वाध्याय' के अभ्यास से मन को परिवर्तित किया जा सकता है। मुनि पतंजलि इसी अवस्था के लिए विपरीत विचारों के मनन पर बल देते हुए कहते हैं कि ''जब मन अशांत

हो, असद् विचारों से तो मनन करना विपरीत विचारों का।'' असद् विचार दुख, निराशा, हिंसा आदि को दर्शाते हैं। यह विधि भी विद्वानों के अनुसार उपयोगी है। जिसमें विपरीत विचारों का मनन किया जाए।

विद्वानों व आयुर्वेदाचार्यो ने ऊर्जा के विभिन्न रूपों का वर्णन करते हुए इन समस्याओं को तामसिक ऊर्जा की उत्पत्ति माना है। तामसिक ऊर्जा के फलस्वरूप व्यक्ति निराशा भाव एवं अवसाद भाव को प्राप्त हो जाता है। स्वामी विवेकानन्द जी के अनुसार ''एक तामसी मन आत्मा के अपर आलोक को ढक लेता है। जिसके कारण वह शरीर को प्रधान मानते हुए दुख भोगता है। स्वामी जी के अनुसार ''प्राणायाम के विधान शरीर के अवयवों को व्यवस्थित रखने में बड़े सहायक है जिससे मन संतुलित रहकर प्रफ्फुलित होता है। छात्रों की निराशावादी एवं अवसादवादी अवस्था काफी हद तक समाज की देन है। समाज का तुलनात्मक होना छात्रों में प्राकृतिक विकास को उत्पन्न नहीं होने देता। उनके मूलभूत गुण विकसित नहीं हो पाते। स्पर्धा व दिखावटी माहौल में वे गलत दिशा में जाकर निराशा, अवसाद को प्राप्त हो जाते हैं। पतंजलि योग छात्रों को अपने मूल गुण को समझने में मदद करते हैं। जिसमें 'यम' से लेकर ध्यान तक सभी चरण उपयोगी है। एक अन्य मानसिक समस्या जो वर्तमान में विकराल रूप धारण कर रही हे वह है 'तनाव'। वर्तमान में 'तनाव' छात्र जीवन का ही नहीं वरन् मनुष्य जाति के लिए भी एक विकराल समस्या बनता जा रहा है। योगियों के अनुसार 'तनाव' द्वैत होने से होता है। जहाँ दो है जहाँ भीड़ है , वहाँ तनाव है। यह मन के संकल्प विकल्प की अवस्था है। मुनि पतंजलि 'यम' के माध्यम से 'तनाव' को समाप्त करने का प्रयास करते हैं। मुनि पतंजलि के अनुसार यम मानसिक शुद्धता प्रदान करते हैं। विद्वानों के अनुसार मानसिक व शारीरिक पवित्रता तनाव को कम करती है।

छात्र जीवन में अष्टांग योग द्वारा सामाजिक एवं पर्यावरणीय प्रभाव

पतंजलि अष्टांग योग शारीरिक व मानसिक दृष्टि के साथ–साथ सामाजिक, आध्यात्मिक तथा पर्यावरणीय दृष्टि से भी अत्यंत उपयोगी है। प्राचीन भारतीय शास्त्रों के अनुसार अष्टांग योग में आरंभिक विकास के साथ समाज एवं विश्व कल्याण की भावना भी निहित है। मुनि पतंजलि मनुष्य जाति के दुख का संवर्धन योग के द्वारा करते हैं। उच्च साधना में पतंजलि कायारूपी आवरण गिर जाने की बात करते हैं। जिससे जीवन की संपूर्णता प्राप्त की जा सके।

'योग' छात्रों के माध्यम से सामाजिक व विश्व कल्याण का साधन बन सकता है तथा सामाजिक, पर्यावरणीय समस्याओं से भी निजात दिला सकता है। पतंजलि योग शास्त्र के भय एवं नियम मूल रूप से सामाजिक एवं पर्यावरणीय आधार है। आज वैश्विक स्तर पर छात्र जीवन में हिंसा, नकारात्मक व्यवहार, लैंगिक अपराध, भ्रष्टाचार जैसी समस्याएँ देखी जा रही हैं। मुनि पतंजलि के यम व्रत जैसे अहिंसा, बह्मचर्य, तप, सत्य (नियम) आदि सामाजिक उत्थान में सार्थक प्रतीत होते हैं। अहिंसा के फलस्वरूप पतंजलि कहते हैं कि अहिंसा की दृढ़ स्थिति हो जाने पर सब प्राणियों का बैर छूट जाता है। छात्रों के जीवन में अहिंसा के पाठ से सामाजिक एवं सांप्रदायिक द्वेष भी समाप्त किए जा सकते हैं क्योंकि छात्र आने वाले भविष्य के सामाजिक सदस्य होते हैं। व्यापक स्तर पर भी योग के माध्यम से सामाजिक द्वेष समाप्त किया जा सकता है। अहिंसा छात्रों में हिंसात्मक विचारों को समाप्त कर उनका विकास करने में सक्षम है। गाँधी जी के अनुसार अहिंसा से सिर्फ बाहरी हिंसा को ही नहीं, आन्तरिक हिंसा को भी रोका जा सकता है। जैसे काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार।

विद्वानों के अनुसार छात्रों में अहिंसा के माध्यम से शांति, करूणा, मानवता, सेवा, त्याग जैसी भावनाओं का विकास संभव है। जिसकी सामाजिक आवश्यकता एवं मानवीय आवश्यकता दोनों हैं। व्यक्तिगत असंतुलन का प्रभाव सामाजिक धारणा व सामाजिक विचार शक्ति पर पड़ता है। योग व्यक्तिगत रूप से संतुलित मानसिकता

प्रदान करता है। जिससे सामाजिक विकास संभव हो। आचार्य कृष्णानन्द जी के अनुसार सामाजिक समस्याएँ व्यक्तिगत समस्याएँ ही हैं, क्योंकि व्यक्तिगत स्तर पर उत्पन्न समस्याएँ एवं विध्वंसक विचार ही सामाजिक रूप ले लेते हैं। अहिंसा के माध्यम से ही सामाजिक स्तर पर बंधुत्व की भावना विकसित हो सकेगी। स्वामी श्री जयदयाल गोयन्दका जी के मतानुसार – 'यम' व 'नियम' के पालन से काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि दुर्गुणों का नाश होकर अन्तःकरण पवित्र होता है और उत्तम गुणों का समावेश होता है। इस संदर्भ में छात्रों में योग नियम अभूतपूर्व संतुलन पैदा करते हैं। विद्वानों के अनुसार छात्रों में बढ़ती नकारात्मक गतिविधियों का कारण उन पर लगातार बढ़ते पारिवारिक महत्वकांक्षाओं के दबाब का परिणाम है। जिसके लिए आज हमें शारीरिक गतिविधियों पर व्यापक ध्यान देना होगा। मनावैज्ञानिक जार्ज ईवरली के अनुसार ''मानसिक दबाब को समझने के लिए हमको मानसिकता के विषय एवं शारीरिक विषय का वास्तविक ज्ञान होना जरूरी है।'' इस संदर्भ में नियम, मानसिक विकारों को रोकने व उनका निर्देशन करने में सक्षम होते हैं। स्वामी विवेकानन्द जी के अनुसार हमारा खान–पान लगातार हमारा शरीर व मन बनाता रहता है। अर्थात् जिस तरह का भोजन एवं आदत विकसित की जाएगी उसी प्रकार का मन व विचार निर्मित होंगे। डॉ0 नीरज त्रिपाठी सामाजिक दृष्टि से सात्विक रजोगुण विकसित करने के लिए योग को व्यक्तित्व विकास के संदर्भ में आवश्यक मानते हैं। इसके लिए खान–पान संबंधी आदतों को ध्यान में रखने की आवश्यकता है। इससे वैचारिक परिवर्तन द्वारा हिंसा, लैंगिक अपराध, नकारात्मक व्यवहार को परिवर्तित कर छात्रों का सामाजिक विकास संभव है।

निष्कर्ष–

'योग' पद्धति पाठ्यक्रम व क्रियाओं तक सीमित न दिखाई देते हुए जीवन पद्धति का मूल स्त्रोत दिखाई देती है, जो किशोरावस्था में अधिक महत्वपूर्ण प्रतीत होती है। यौवनकाल विकास का पल्लवन काल होता है जिसमें पतंजलि योग सूत्र जीवन का निर्देश ही नहीं करते बल्कि सम्पूर्ण रूप से उस पर नियंत्रण करने में भी सक्षम प्रतीत होते हैं। प्राचीनकाल की विभिन्न विकासात्मक पद्धतियों में से योग अधिक उपयोगिता व विस्तार लिए हुए है। इसकी पुष्टि विभिन्न उपदेशात्मक ग्रन्थों में योग के वर्णन से मिलती है चाहे गीता, महाभारत, रामायण, उपनिषद् जैसे मानवीय संवेदनाओं और मनोवैज्ञानिक रूप से रचे ग्रन्थ ही क्यों न हो। वर्तमान छात्र स्वयं के प्रतिष्ठित रूप को भूल गया है। जिससे दूसरे की सफलता, समृद्धि को स्वयं से जोड़कर तनाव उत्पन्न कर लेता है। मुनि पतंजलि अस्तेय की उपलब्धता के बारे में कहते हैं कि जब योगी सुनिश्चित रूप से अस्तेय में उपलब्ध हो जाता है तब आंतरिक समृद्धियाँ स्वयं उदित होती है। जब दूसरी तरफ ईर्ष्या, प्रतिस्पर्धा के भाव से देखना बंद हो जाएगा तो मानसिक तनाव समाप्त होगा। आचार्य रजनीश के अनुसार ''अचौर्य का अर्थ है वह मन जो ईर्ष्यालु नही है, जो प्रतियोगी नही है। क्योंकि प्रतियोगिता तनाव उत्पन्न करती है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची–

- कृष्णमूर्ति, जे0; ''शिक्षा एवं जीवन का तात्पर्य'' कृष्णमूर्ति फाउंडेशन इंडिया, वाराणसी, 2011।
- कृष्णमूर्ति, जे0; ''स्कूलों को पत्र'', कृष्णमूर्ति फाउंडेशन इंडिया, वाराणसी 2010।
- कृष्णमूर्ति, जे0;''संस्कृति का प्रश्न'', कृष्णमूर्ति फाउंडेशन इंडिया, वाराणसी, 2010।
- कठोपनिषद् (शंकर भाष्य सहित); गीता प्रेस, गोरखपुर , 1999।
- कटारिया, सुरेन्द्र; ''प्रशासनिक सिद्धान्त एवं प्रबन्ध'', नेशनल पब्लिशिंग हाउस, जयपुर, 2009।
- मदन, जी0आर0;''भारतीय सामाजिक समस्याएँ'', केदारनाथ रामनाथ प्रकाशन, मेरठ (उ0प्र0), 1968।

- मनु; ''मनुस्मृति'', निर्णय सागर प्रेस, बम्बई, 1991।
- मूर्ति, कृष्ण कृपा; ''श्रीमद् भगवद् गीता'' (व्याख्या सहित) , भक्ति वेदान्त बुक ट्रस्ट, मुंबई, 1990।
- त्रिपाठी, रमाकान्त; ''ब्रह्म सूत्र'' (शंकर भाष्य चतुः सूत्री), उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान लखनऊ, 1991।
- भिक्षु, धर्मरक्षित; ''धम्मपद'' (मूलपलि, संस्कृत व हिन्दी अनुवाद) मोतिलाल बनारसीदास प्रकाशन 2011।
- शिवानन्द; ''योग से रोग निवारण'', सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन, नई दिल्ली 2009।
- सिंह, केदारनाथ एवं शशिभूषण; ''भारतीय दर्शन'', ज्ञानदा प्रकाशन, नई दिल्ली, 1990।
- सिंह, शिव भानु;''समाज दर्शन का सर्वेक्षण'', शारदा पुस्तक भवन, इलाहबाद, 2001।
- सिंह, अरूण कुमार;''समाज मनोविज्ञान की रूपरेखा'', मोतीलाल बनारसीदास प्रकाशन, नई दिल्ली, 1968।
- सिन्हा, हरेन्द्र प्रसाद; ''भारतीय दर्शन की रूपरेखा'', मोतीलाल बनारसीदास प्रकाशन, जवाहन नगर, दिल्ली 1993।
- विभव, देवकी नंदन; ''योग साधन'', सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली, 2005
- विवेकानन्द; ''विवेकानन्द साहित्य'' (भाग–4) , अद्वैत आश्रम कोलकाता 2004।
- भावे, बिनोवा;''अहिंसा : विचार और व्यवहार'' , भावना प्रकाशन, करनाल, 1970।
- पतंजलि; ''पतंजलि योग सूत्र'', गीता प्रेस गोरखपुर, 2010।
- श्रीकर, बालभट्टी;''याज्ञवल्क्य स्मृति'', नाग प्रकाशन दिल्ली 1998
- रामदेव; ''योग साधन'', दिव्य प्रकाशन, पतंजलि योग पीठ, हरिद्वार, 2004।
- रामदेव;''विज्ञान की कसौटी पर योग'', दिव्य प्रकाशन, दिव्य योग मन्दिर, हरिद्वार 2007।